अनुयोगद्वार सूत्र

डॉ. प्रिया जैन

अनुयोगद्वारसूत्र की गणना मूल सूत्रों में होती है। इसे चूलिका सूत्र भी कहा गया है, जिसे आधुनिक भाषा में परिशिष्ट कहा जा सकता है। आर्यरक्षित द्वारा निर्मित यह आगम आगमों एवं टीकाग्रन्थों की शैली का प्रतिपादन करता है। इस शैली का उपयोग दिगम्बर ग्रन्थ षट्खण्डागम की धवला टीका में भी दृष्टिगोचर होता है. मद्रास विश्वविद्यालय में जैन धर्म—दर्शन की अतिथि प्राध्यापक डॉ. प्रिया जैन ने अनुयोगद्वार सूत्र की विषयवस्तु को संक्षेप में प्रस्तुत किया है।– **सम्पादक**

जिनत्व का प्रकाश और जैनत्व का आधार स्रोत है जैनागम।
सद्धर्म, दर्शन, संस्कार और संस्कृति का निर्झर है जैनागम।
अज्ञान तिमिर दूर हटा, ज्ञान का आलोक फैलाता है जैनागम।
श्रुतज्ञान की अक्षुण्ण धारा का अपर नाम है जैनागम।
सभ्यता एवं आध्यात्मिकता की अनुपम निधि है जैनागम।
स्व का परिचय, पर का विवेक कराता है जैनागम।
सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का साकार रूप है जैनागम।
सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, वीतराग प्रभु के हस्ताक्षर है जैनागम।
आत्मज्ञान, वीतराग विज्ञान का अक्षुण्ण भंडार है जैनागम।
श्रुतसागर में मोक्षसागर को समेटे है जैनागम।
अनन्त काल तक आनन्द बरसाता है जैनागम।
जन्म, जरा, मरण के महासिन्धु से पार उतारता है जैनागम।
अणु और ब्रह्माण्ड के रहस्य खोलता है जैनागम।
आत्मज्ञान, आत्मदर्शन, आत्मरमण का प्रेरणा-स्रोत है जैनागम।

जैनागम सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, वीतराग प्रभु की वाणी है जो कि भारतीय साहित्य की अनुपम एवं अमूल्य धरोहर है। इनके अध्ययन के बिना भारतीय इतिहास का सही चित्रण व संस्कृति का सम्यक् मूल्यांकन असंभव है। तत्त्वद्रष्टा, आत्मविजेता वीतराग प्रभु ने आगमों में आत्मा की शाश्वत सत्ता का उद्घोष किया है, अनमोल मनुष्य जन्म को सार्थक करने की प्रेरणा व आत्मशुद्धि का महापथ प्रकाशित किया है। तीर्थंकरों द्वारा प्रणीत, गणधरों द्वारा सूत्रबद्ध आगम गणिपिटक या द्वादशांगी के नाम से अभिहित हैं और अंग बाह्य आगमों में उपांग, मूल, छेद आदि सूत्र समाहित है। भगवान महावीर के अंतिम उपदेश रूप उत्तराध्ययन सूत्र, पुत्र मनक के लिये शय्यंभव द्वारा कृत दशवैकालिक सूत्र, देववाचक कृत नन्दीसूत्र एवं आर्य रक्षित द्वारा रचित अनुयोगद्वार सूत्र ये चार मूल सूत्र कहे जाते हैं। अनुयोग द्वार सूत्र को चूलिका सूत्र होने से आगम परिशिष्ट भी कहा जा सकता है। सूत्रकृतांग, प्रज्ञापना, स्थानांग, समवायांग की तरह अनुयोगद्वार सूत्र में दार्शनिक विषयों का तलस्पर्शी विवेचन मिलता है। जैसे पांच ज्ञानरूप नन्दी मंगलस्वरूप है वैसे ही अनुयोगद्वार सूत्र समस्त आगमों और उनकी व्याख्याओं को समझने में कुंजी सदृश है। जैसे एक भव्य मंदिर शिखर से अधिक शोभा प्राप्त करता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है वैसे ही आगम मंदिर भी नन्दी और अनुयोगद्वार रूप शिखर से अधिक जगमगाता हैं। नन्दी और समवायांग में जो आगमों का परिचय दिया है उसमें आचारांग आदि आगमों के संख्येय अनुयोगद्वार हैं, यह उल्लेख है। भगवती सूत्र में अनुयोगद्वार सूत्रगत अनुयोगद्वार के चार मूलद्वारों में से नयविचारणा का विस्तृत वर्णन किया है। इस संक्षिप्त संकेत से यह कहा जा सकता है कि भगवान महावीर के समय में सूत्र की व्याख्या करने की जो विद्या थी, उसका समावेश करने वाला सूत्र अनुयोगद्वार है। प्रस्तुत आगम में व्याख्येय शब्द का निक्षेप करके, उसके अनेक अर्थों का निर्देश कर, उस शब्द का प्रस्तुत में कौनसा अर्थ ग्राह्य है, यह शैली अपनायी गई है। इसी शैली का अनुसरण वैदिक और बौद्ध साहित्य में भी किया गया हैं।

अनुयोग और अनुयोगद्वार एक चिन्तन

शब्द तथा अर्थ के योग को अनुयोग कहते हैं। 'अनु' उपसर्ग और 'योग' शब्द से 'अनुयोग' बना है। सूत्र या शब्द के अनुकूल, अनुरूप या सुसंगत संयोग अनुयोग हैं। अनुयोग, नियोग, भाषा, विभाषा और वार्तिक ये पांचों पर्यायवाची और अनुयोग के एकार्थवाची नाम हैं। अनुयोग की निरुक्ति में सूची, मुद्रा, प्रतिघ सम्भवदल और वर्तिका—ये पाँच दृष्टान्त गिनाये हैं। लकड़ी से किसी वस्तु को तैयार करने के लिए पहले लकड़ी के निरुपयोगी भाग को निकालने के लिए उसके ऊपर एक रेखा में जो डोरा डाला जाता है, वह सूची कर्म है। उस डोरे से लकड़ी के ऊपर जो चिह्न किया जाता है वह मुद्रा कर्म है। इसके बाद उसके निरुपयोगी भाग को छांटकर निकाल दिया जाता है— इसे प्रतिघ कर्म कहते हैं। फिर इस लकड़ी के आवश्यकतानुसार जो भाग कर दिये जाते हैं वह सम्भवदल कर्म है और अन्त में वस्तु तैयार करके उस पर पालिश आदि कर दी जाती है, वह वर्तिका कर्म है। इस प्रकार इन पांच कर्मों से जैसे विवक्षित वस्तु तैयार हो जाती है, उसी प्रकार अनुयोग शब्द से भी आगमानुकूल सम्पूर्ण अर्थ का ग्रहण होता है। द्रव्यसंग्रह में अनुयोग, अधिकार, परिच्छेद, प्रकरण इत्यादि एकार्थवाची शब्द गिनाये हैं और कसायपाहुड़ में अनुयोगद्वार पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि अर्थ के जानने के उपायभूत अधिकार को अनुयोगद्वार कहते हैं। पंडित सुखलाल जी अनुयोग का अर्थ व्याख्या या विवरण करते हैं और द्वार का अर्थ प्रश्न करते हैं। इस प्रकार प्रश्न या प्रश्नों के माध्यम से विचारणा द्वारा वस्तु के तह तक पहुंचने को अनुयोगद्वार कहते हैं। स्याद्वादमंजरी में प्रवचन-अनुयोग रूपी महानगर के चार द्वार बताये हैं— उपक्रम, निक्षेप, अनुगम और नय। तत्त्वार्थाधिगम सूत्र में तत्त्वों के विस्तृत ज्ञान के लिए निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण आदि चौदह अनुयोगों या विचारणा द्वारों का निर्देश किया है। तत्त्वार्थ सूत्र में ही नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव से तत्त्वों का न्यास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् निक्षेप होने का निर्देश मिलता है और इसी का अनुयोगद्वार सूत्र में यत्र—तत्र—सर्वत्र प्रयोग हुआ है। धवला में अनुयोगों का प्रयोजन पदार्थों का स्पष्टीकरण है। भगवान महावीर ने पहले अर्थ का उपदेश दिया और बाद में गणधरों ने सूत्र की रचना की। सूत्र, अर्थ के बाद में है इसलिए 'अनु' कहलाता है। इस अनु का 'अर्थ' के साथ योग 'अनुयोग' है। सारांश यह है कि शब्दों की व्याख्या करने की प्रक्रिया अनुयोग है। इस प्रकार अनुयोगद्वार सूत्र एक महाकोशसे कम नहीं है जो आगम वर्णित तथ्यों, सिद्धान्तों, तत्त्वों को समझने हेतु सम्यक् दिग्दर्शन करता एक अनूठा आगम है।

जैन आगम साहित्य को अनेक अनुयोगों में विभक्त किया गया है। बारहवें अंग दृष्टिवाद के परिकर्म, सूत्र, पूर्वगत, अनुयोग और चूलिका ये पांच भेद किये गये हैं। दिगंबर परम्परा में प्रथमानुयोग, चरणानुयोग, करणानुयोग और द्रव्यानुयोग तथा श्वेताम्बर परम्परा में चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग, गणितानुयोग और द्रव्यानुयोग इस प्रकार चार अनुयोग हैं। नाम और क्रम भेद से दोनों परम्पराओं में अनुयोग के माध्यम से तत्त्वज्ञान, इतिहास, जैन आचार, कर्म-सिद्धान्त आदि का सुन्दर विवेचन विश्लेषण मिलता है। समग्र आगम साहित्य में अनुयोगों का वर्णन पृथक् एवं अपृथक् रूप से दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन काल में प्रत्येक सूत्र की चारों अनुयोगों द्वारा व्याख्या की जाती थी। अनुयोगद्वारसूत्र के रचनाकार आर्यरक्षित से पूर्व श्रुतज्ञान प्रदान करने की परम्परा यह थी कि पूर्वधर व श्रुतधर आचार्य अपने प्रतिभाशाली मेधावी शिष्यों को सूत्रों की वाचना देते समय चारों अनुयोगों का सहज रूप से बोध करा देते थे, अर्थात् द्वादशांगी सूत्र ज्ञान के साथ—साथ अविभक्त रूप से अनुयोग की दृष्टि से व्याख्या कर देते थे। जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण से लिखा है कि आर्य वज्र तक जब अनुयोग अपृथक् थे तब एक ही सूत्र की चारों अनुयोगों के रूप में व्याख्या होती थी।

अनुयोगद्वार के रचनाकार

आर्यरक्षित अनुयोगद्वार नामक चतुर्थ मूलसूत्र के संकलनकर्ता व रचनाकार माने जाते हैं। आर्य रक्षित के पूर्व आगमों के अनुयोगों के अपृथक् रूप से चली आ रही वाचना परम्परा पृथक् अनुयोग की व्यवस्था के रूप में उभर कर आई। आर्यरक्षित के अनेकानेक ज्ञानी, ध्यानी, शिष्य समुदाय में चार प्रमुख शिष्य थे— दुर्बलिकापुष्यमित्र, फल्गुरक्षित, विन्ध्य और गोष्ठामाहिल। दुर्बलिकापुष्यमित्र अविरत रूप से स्वाध्याय में लीन रहते थे। अन्य तीन प्रतिभासम्पन्न शिष्यों की प्रार्थना पर पृथक् वाचनाचार्य के रूप में दुर्बलिका पुष्यमित्र को नियुक्त किया गया। नये वाचनाचार्य के सामने समयाभाव के कारण पठित ज्ञान के विस्मरण होने की समस्या आ खड़ी हुई। तब आर्यरक्षित आगम-ज्ञान की असुरक्षा के विचार से चिन्तित हो उठे और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूरदर्शिता से काम लेते हुए उन्होंने इस अति दुर्गम श्रुतसाधना को सरल, सुगम्य बनाने हेतु अनुयोग की व्यवस्था प्रस्तुत की। अनुयोगद्वार में द्रव्यानुयोग की प्रधानता है। वीर निर्वाण सं. ५९२, वि.सं. १२२ के आसपास यह महत्त्वपूर्ण कार्य दशपुर में सम्पन्न हुआ। इसमें चार द्वार हैं, १८९९ श्लोकप्रमाण उपलब्ध मूल पाठ है। १५२ गद्य सूत्र हैं और १४३ पद्य सूत्र हैं। श्रमण भगवान महावीर के समय की व्याख्यापद्धति का ही अनुकरण अनुयोगद्वार में किया गया है, यह स्पष्ट विदित होता है। इसके अनन्तर लिखे गये श्वेताम्बर एवं दिगम्बर परम्परा के ग्रंथों में भी इसी शैली का अनुकरण मिलता है। अनुयोगद्वार पर दो चूर्णियां, एक टीका, दो वृत्तियां, एक टब्बा, व्याख्याएँ, अनुवाद आदि मिलते हैं, इससे इसकी उपयोगिता सिद्ध होती है।

अनुयोगद्वार की विषय वस्तु

सर्वप्रथम सत्य के उद्‌बोधक के रूप में पंच ज्ञान से अनुयोगद्वार सूत्र का मंगलाचरण रचनाकार ने किया है। इसके पश्चात् श्रुतज्ञान के उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग की प्रवृत्ति का संकेत कर आवश्यक अनुयोग पर सर्वांगीण प्रकाश डाला है। आवश्यक सूत्र में साधना क्रम होने से आवश्यक सूत्र की व्याख्या सर्वप्रथम करके साधक, साधना और साध्य की त्रिपुटी के रहस्य को खोलने का सफल प्रयास किया है। आवश्यक श्रुतस्कन्धाध्ययन का स्वरूप चार निक्षेपों द्वारा स्पष्ट करते हुए यह सिद्ध किया है कि आवश्यक एक श्रुतस्कन्ध रूप और अनेक अध्ययनरूप है।—देखें चार्ट

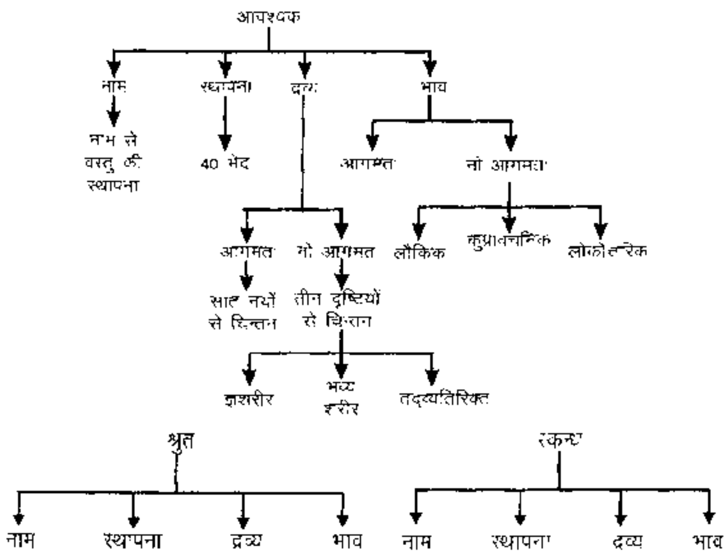

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवश्यक—नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव निक्षेप से चार प्रकार का है तथा स्थापना आवश्यक के चालीस भेद बताये हैं। आगमतः द्रव्य आवश्यक को सप्तनय से तथा नोआगमतः द्रव्य आवश्यक को ज्ञशरीर, भव्यशरीर तथा तदव्यतिरिक्त/ तद्व्यतिरिक्त-- इन तीन दृष्टियों से समझाया है। भाव आवश्यक के दो भेद बताकर नो आगमतः भाव आवश्यक के तीन उपभेदों को समझाने की आवश्यकता व आवश्यक के अवश्यकरणीय ध्रुवनिग्रह, विशोधि, अध्ययन— षट्कवर्ग, न्याय, आराधना और मार्ग एकार्थक नामों की परिभाषा से प्रथम आवश्यक अधिकार का वर्णन समाप्त करते हैं।

आवश्यक का निक्षेप करने के पश्चात् श्रुत का निक्षेप पूर्वक विवेचन करते हुए आगमकार श्रुत के भी नामश्रुत, स्थापना श्रुत, द्रव्यश्रुत, भावश्रुत भेद करके पुनश्च उनके उपभेद करके लौकिक, लोकोत्तरिक श्रुत आदि तथा अन्य श्रुत, सूत्र, ग्रन्थ, सिद्धान्त, शासन, आज्ञा वचन, उपदेश, प्रज्ञापना, आगम आदि एकार्थक पर्याय नाम देकर स्कन्ध निरूपण करते हैं। स्कन्ध के भी नाम, स्थापना, द्रव्य भाव से चार प्रकार करके स्कन्ध के गण, काय, निकाय, स्कन्ध, वर्ग, राशि, पुंज, पिंड, निकर, संघात, आकुल समूह - इन पर्यायवाची शब्दों की व्याख्या कर स्कन्धाधिकार का वर्णन पूर्ण करते हैं।

आवश्यक, श्रुत, स्कन्ध—इन तीन अधिकारों के पश्चात् सावद्ययोगविरत (सामायिक), उत्कीर्तन (चतुर्विंशतिस्तव), गुणवत्प्रतिपत्ति (वंदना),स्खलितनिन्दा (प्रतिक्रमण), व्रण चिकित्सा (कायोत्सर्ग) तथा गुणधारणा (प्रत्याख्यान)—आवश्यक के ये छह अध्ययन स्पष्ट करके सामायिक अध्ययन के उपक्रम, निक्षेप, अनुगम और नय इन चार अनुयोगद्वारों का विस्तार से वर्णन प्रारम्भ करते हैं।

सामायिक समस्त चारित्रगुणों का आधार तथा मानसिक, शारीरिक दुःखों के नाश तथा मुक्ति का प्रधान हेतु है। अनुयोग का अर्थ करते हुए कहा है कि अर्थ का कथन करने की विधि अनुयोग है। वस्तु का योग्य रीति से प्रतिपादन करना उपक्रम है। निक्षेप सूत्रगत पदों का न्यास है, अनुगम सूत्र का अनुकूल अर्थ कहना है तथा अनन्त धर्मात्मक वस्तु के एक अंश को ग्रहण करना नय है।

उपक्रम के नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से भेद करके उपक्रम के अन्य प्रकार से आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, वक्तव्यता, अर्थाधिकार तथा समवतार ये छह भेद बताये हैं। सर्वप्रथम आनुपूर्वी का अर्थ अनुक्रम या परिपाटी बतलाकर नामानुपूर्वी, स्थापनानुपूर्वी आदि दस प्रकार से आनुपूर्वी का अत्यन्त विस्तार से वर्णन विश्लेषण किया गया है।

इस विवेचन में अनेक जैन मान्यताओं का दिग्दर्शन कराया गया है। आनुपूर्वी के पश्चात् नाम उपक्रम सामायिक अध्ययन में एक से दस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुयोगद्वारसूत्र : एक झलक में

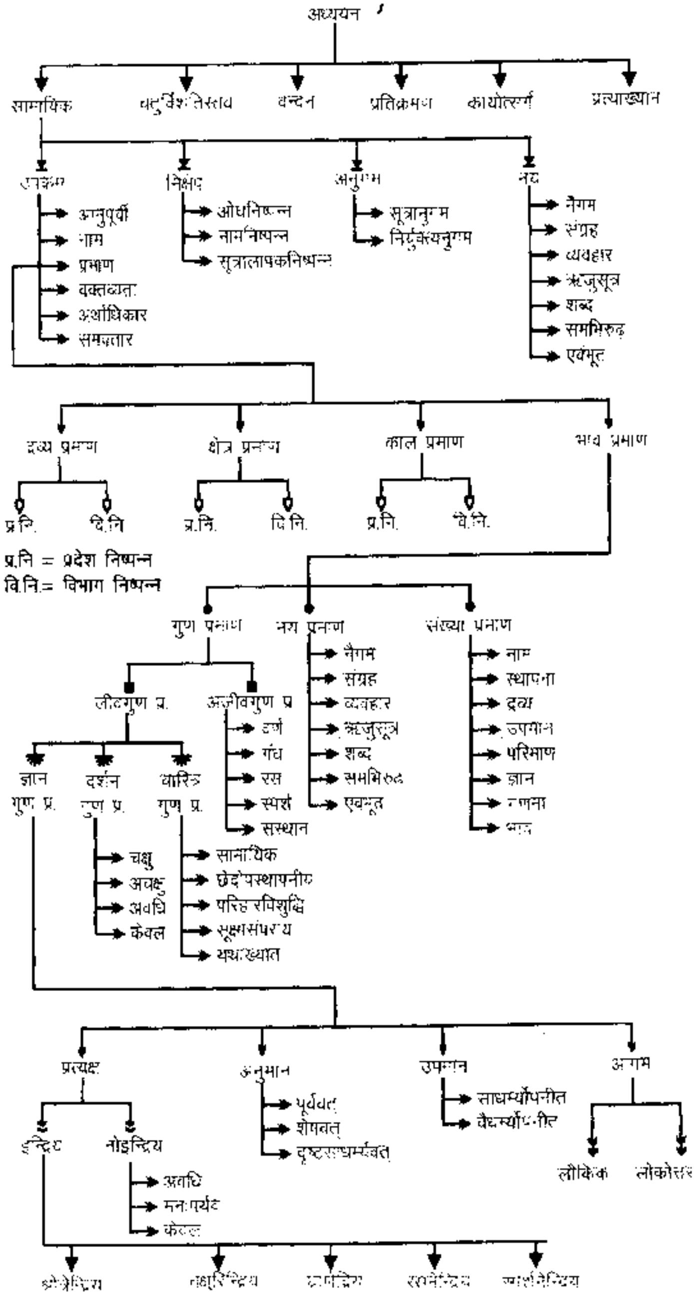

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम की प्ररूपणा स्थानांग की तरह की गई है। इसके अन्तर्गत अनेकानेक विषयों का विस्तार उपलब्ध होता है जैसे कि अक्षर विज्ञान, जीव स्थान, लोकस्वरूप, छह आरा, स्वर विज्ञान, अष्ट विभक्ति, नव रस, जीव के भाव, पुद्गल के लक्षण, गीत की भाषा, समास आदि का परिचय तथा विस्तार मिलता है। नाम अध्ययन के अन्तर्गत भाव-संयोग निष्पन्न नाम में धर्मों को भाव कहा है[२३]। ज्ञान, दर्शन, चारित्र प्रशस्त भाव नाम हैं तथा क्रोधादि विकार अप्रशस्त भावनाम हैं[२४]।

उपक्रम के तृतीय प्रमाणाधिकार में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के रूप में प्रमाण का अत्यन्त विस्तृत विवेचन मिलता है जो कि अद्वितीय है, अनुपम है और श्रुतज्ञान का बेजोड़ प्रस्तुतीकरण है। द्रव्य, क्षेत्र, काल, प्रमाण के प्रदेश निष्पन्न और विभागनिष्पन्न ये दो दो भेद करके उनके उपभेदों के माध्यम से मापने लायक समस्त वस्तुओं को मापने का तरीका बताया है। प्रमाण शब्द यहां न्यायशास्त्र प्रसिद्ध अर्थ का वाचक नहीं, किन्तु व्यापक अर्थ में प्रस्तुत किया गया है[२५]। वस्तुओं के स्वरूप को मापना प्रमाण है। द्रव्यत: क्षेत्रत:, कालत: तथा भावत: वस्तुओं का प्रमाण यहां किया गया है फिर चाहे वह धान्य, रस, मार्ग, सुवर्ण, रत्न, परमाणु, परावर्तन, अवगाहना, काल या फिर जीव के ज्ञान,दर्शन आदि तथा अजीव के वर्ण, रस आदि भाव ही क्यों न हों। प्रत्यक्ष ज्ञान के अन्तर्गत इन्द्रिय प्रत्यक्ष का और नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष के अन्तर्गत अवधि, मन:पर्यवज्ञान तथा केवलज्ञान का स्वरूप बताया है। अनुमान, उपमान, आगम, दर्शनगुण तथा चारित्र गुण का वर्णन जीवगुण प्रमाण के अन्तर्गत किया गया है। अजीवगुण प्रमाण में वर्ण, गंध, रस, स्पर्श और संस्थान के प्रमाणत्व की चर्चा है।

नयप्रमाण का तीन दृष्टान्तों द्वारा स्पष्टीकरण है। प्रस्थक, वसति व प्रदेश के दृष्टान्त द्वारा सप्त नय की सुन्दर चर्चा है। प्रस्थकदृष्टान्त में काल की मुख्यता है, वसति में क्षेत्र का और प्रदेशदृष्टान्त में द्रव्य व भाव का विचार किया गया है[२६]। संख्याप्रमाण आठ प्रकार का है। संख्येय, असंख्येय, अनन्त—इनके जघन्य, मध्यम उत्कृष्ट आदि का विस्तार संख्याप्रमाण के गणनाप्रमाण के अन्तर्गत मिलता है।

प्रमाण उपक्रम में सामायिक अध्ययन के पश्चात् वक्तव्यता, अर्थाधिकार और समवतार उपक्रम अध्ययन के वर्णन किये हैं। वक्तव्यता के अन्तर्गत स्वसमय सिद्धान्त तथा पर समय सिद्धांत की व्याख्या तथा अर्थाधिकार में उन—उन अध्ययनों का अर्थ है। समवतार का तात्पर्य है वस्तुओं का अपने में, पर में और दोनों में योजना करने का विचार करना। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से वस्तु का अपने में, पर में तथा दोनों में समवतीर्ण होने का विचार षट् समवतार है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुयोगद्वासूत्र ने अधिक भाग उपक्रम की चर्चा में ले रखा है। अनुयोगद्वार सूत्र का दूसरा द्वार निक्षेप है। इसके ओघनिष्पन्ननिक्षेप, नामनिष्पन्ननिक्षेप और सूत्रालापकनिक्षेप ये तीन भेद हैं। ओघनिष्पन्न निक्षेप के अध्ययन, अक्षीण, आय और क्षपणा ये चार प्रकार हैं और नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव से उन चारों के चार–चार भेद हैं। ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आय प्रशस्त आय है व क्रोधादि कषाय की प्राप्ति अप्रशस्त आय है।

नामनिष्पन्न निक्षेप में सामायिक की नाम, स्थापना, द्रव्य एव भाव निक्षेप से व्याख्या है। जिसकी आत्मा संयम, नियम और तप से सन्निहित है, उसी को सामायिक होती है। यहां श्रमण के लिए सर्प, गिरि, अग्नि, सागर, आकाश, तरु, भ्रमर, मृग, पृथ्वी, कमल, सूर्य, पवन– ये उपमाएं प्रयुक्त की गई हैं। श्रमण वह है जो संयम आदि में लीन है, समभाव युक्त है, सभी को स्वसमान देखता है। सूत्रालापकनिक्षेप में सूत्र का शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण करने की आज्ञा है।

अनुगम, अनुयोगद्वार सूत्र का तृतीय द्वार है। सूत्रानुगम और निर्युक्त्यनुगम–अनुगम के दो भेद हैं। पुनश्च निर्युक्त्यनुगम के तीन भेद करके द्वितीय उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगम के छब्बीस भेदों का उल्लेख है।

अनुयोगद्वार का चौथा द्वार नय है। जितने वचन उतने नय की उक्ति प्रसिद्ध है, किन्तु सात नयों में समस्त नयों का समावेश हो जाता है। नैगमनय तीनों कालों संबंधी पदार्थ को ग्रहण करता है। संग्रहनय सामान्य रूप से पदार्थ का ज्ञान कराता है। व्यवहारनय सामान्य का अभाव सिद्ध करने वाला है। ऋजुसूत्रनय वर्तमानकालिक सत्य का ही प्ररूपण करता है।शब्दनय में शब्द मुख्य और अर्थ गौण होता है। समभिरूढ नय शब्द भेद से अर्थ भेद मानने वाला नय है। एवंभूतनय पर्याय में रहे हुए वस्तु को मुख्य करता है। नय विचार से हेय-उपादेय का विवेक व जीवन में उसके अनुकूल प्रवृत्ति–निवृत्ति का विवेक जागृत होता है। जो अनन्त धर्मात्मक वस्तु को नय की कसौटी पर कसकर ग्रहण करता है वही मुमुक्षु है, वही सच्चा साधक है। इस प्रकार अनुयोगद्वार सूत्र का वर्णन समाप्त होता है।

इस प्रकार अनुयोगद्वार सूत्र जैन पारिभाषिक शब्दों एवं सिद्धान्तों का कोश सदृश है। उपक्रम निक्षेप शैली की प्रधानता एवं भेद–प्रभेदों की प्रचुरता होने से यह आगम अन्य आगमों से क्लिष्ट है, तथापि जैन दर्शन के रहस्य को समझने के लिए अतीव उपयोगी है। अनुयोगद्वार के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सत्य के विविध आयाम हैं तथा उपर्युक्त भेद–प्रभेद, नय–निक्षेप की शैली से सत्य का साक्षात्कार सहज रूप से हो सकता है। आवश्यकता है तो दृढ़ संकल्प की, सुलझे हुए दृष्टिकोण की और सत्य के खोज हेतु पिपासा की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संदर्भ

१. जैन आगम साहित्य— देवेन्द्रमुनि शास्त्री, पृ.३१७
२. अनुयोगद्वारसूत्र—स्वकथ्य, केवल मुनि, पृ. ६
३. धम्मकहाणुओगो, मुनि कन्हैयालाल जी 'कमल'
४. जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, भाग १, पृ. १०४,
५. द्रव्य संग्रह टीका, ४२/१८३/२
६. कसायपाहुड ३/३/२२
७. तत्त्वार्थ सूत्र, पं. सुखलालजी, पृ.८
८. चत्वारि हि प्रवचनानुयोगमहानगरस्य द्वाराणि उपक्रम:निक्षेप:अनुगम:नयश्चेति। —स्याद्वादमंजरी, २८
९. तत्त्वार्थसूत्र, उमास्वाति १/७,८
१०. तत्त्वार्थ सूत्र—उमास्वाति १/५
११. धवला २/११/४१५/२
१२. विशेषावश्यकभाष्य—अणुयोजणं.......अणुरूवोऽणुकूलो वा.
१३. अनुयोगद्वारसूत्र, प्रस्तावना, देवेन्द्रमुनि शास्त्री, पृ. २४
१४. द्रव्य संग्रह ४२/१८२, पंचास्तिकाय १७३, तत्त्वार्थवृत्ति २५४/१५
१५. अभिधान राजेन्द्र कोश, भाग१, पृ. ३५६
१६. धम्मकहाणुओगो—प्रस्तावना पृ. ५
१७. मलयगिरि आवश्यकनिर्युक्ति पृ. २८३
१८. अभिधान राजेन्द्र कोश
१९. अनुयोगद्वारसूत्र-- प्रस्तावना देवेन्द्रमुनि शास्त्री, पृ. २८—२९
२०. वही पृ. ५०
२१. वही पृ. ५०
२२. वही पृ. ५०
२३. जैन आगम साहित्य, देवेन्द्रमुनि शास्त्री पृ. ३३४
२४. अनुयोगद्वार सूत्र, सूत्र २७९ पृ. २१०
२५. वही सूत्र २८०—२८१, पृ. २११
२६. वही पृ. २२९
२७. वही पृ. ३९७
२८. जैन आगम साहित्य, देवेन्द्र मुनि शास्त्री पृ. ३४१
२९. अनुयोगद्वार सूत्र ५९९ (अ) पृ.४५४
३०. वही, सूत्र ५९९ (इ) पृ. ४५५
३१. वही पृ. ४६८
३२. जैन आगम साहित्य, देवेन्द्र मुनि शास्त्री, पृ. ३४३

-Guest Lecturer, Dept. of Jainology,
University of Madras
Chennai-600005

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org